अध्याय तृतीय
एलोरा की शिव प्रतिमाएँ - विकास एवं वर्गीकरण

विकास :

भगवान शिव को ईष्टदेव मानने वाले धर्मावलम्बियों के धर्म को शैव धर्म कहा गया है। इस धर्म का विकास अवतारवाद धारणा के आधार पर नहीं हुआ, बल्कि इसका विकास रूद्र से शिव के रूप में हुआ। ब्राह्मण धर्म में त्रिदेवों की कल्पना अति प्राचीन है जो प्रारम्भ में त्रिधा के रूप में सूर्य के ही तीन रूप थे किन्तु पुराणों के समय तक यह धारणा ब्राह्मण धर्म के तीन प्रमुख देवताओं– ब्रह्मा, विष्णु और शिव के रूप में परिणत हुई। इन देवताओं को क्रमशः सृष्टि के तीन प्रमुख कार्यों– रचना, पालन और संहार से सम्बद्ध बताया गया है। त्रिदेवों में विष्णु और शिव निःसन्देह ब्रह्मा की अपेक्षा अधिक लोकप्रिय थे। कालान्तर में विष्णु और शिव पूजा से सम्बन्धित स्वतंत्र सम्प्रदाय भी विकसित हुए। शिव को मुख्यतः संहार कार्य से सम्बद्ध किया गया है। कुछ शैव पुराणों में शिव को संहार के साथ ही सृष्टि की रचना और पालन कार्यों से भी सम्बद्ध किया गया

है। शिव महादेव के रूप में पाँच स्वरूपों – सद्योजात, बामदेव, अघोर, तत्पुरूष और ईशान् में सृष्टि के पाँच मूल तत्वों – जल, अग्नि, पृथ्वी, वायु और आकाश – को भी नियंत्रित करते हैं। एलिफेण्टा और एलोरा की मेश मूर्तियों में शिव त्रिमुख (तीन मुख वाले) हैं जो सम्भवतः उनके शान्त, सौम्य एवं रौद्र मुखों के माध्यम से सृष्टि की रचना, पालन और संहार से उनके सम्बद्ध होने का निरूपण है। शिव को ईश्वर, पशुपति, भूतनाथ, महेश्वर, विश्वनाथ, शंकर, त्रिपुरारि, महादेव, उमापति, कालारि आदि अनेक नामों से सम्बोधित किया गया है। शिव को अनुग्रह एवं तिरोभाव कार्यों से सम्बद्ध किया गया है जिससे उनके पंचकृत्यों का निर्माण होता है। पूर्वमध्यकालीन और मध्यकालीन ब्राह्मण ग्रन्थों में शिव को सृष्टि की रचना करने वाला बताया गया है और साथ ही योग, व्याख्यान, संगीत, नृत्य आदि से भी सम्बन्धित किया गया है जो उनके दक्षिणामूर्ति, वीणाधर दक्षिणामूर्ति एवं नटराज रूपों में देखा जा सकता है। ग्रन्थों में शिव समस्त रचनात्मक कार्यों के कर्ता माने गये हैं।[१] यशोधर्मन् विष्णुधर्मन के मन्दसोर अभिलेख (५३२–३३ ई०) में स्पष्ट उल्लेख किया गया है। ब्रह्मा सृष्टि की रचना, पालन और संहार के कार्य शिव के आदेशों के अनुसार करते हैं और ये सभी कार्य उन्हें शिव द्वारा दिये गये हैं। इस लेख में शिव को सृष्टि की रचना करने वाला (भवसृज) भी कहा गया है।[२]

वैदिक ग्रन्थों के प्रभावशाली देवता रूद्र से ही कालान्तर में शिव का विकास हुआ। शिव के मूर्त अंकन का प्रारम्भ सिन्धु सभ्यता (लगभग २३००–१७५० ई०पू०) के काल से ही स्वीकार किया जाता है। भारतीय कला में शिव को तीन रूपों प्रतीक (शिवलिंग, त्रिशूल), वृषभष्य (नन्दी) और मानव[३] में अभिव्यक्त किया गया है। प्राचीन सिक्कों और मुहरों पर शिव का विभिन्न रूपों में चित्रण मिलता है। मोहनजोदड़ो की खुदाई से प्राप्त एक मुहर पर अंकित पशुपति देव को शिव के पूर्वरूप का अंकन माना गया है। इसमें शिव की योगमुद्रा में बैठी आकृति सिंह, गज, भैंसा, गेंडा एवं मनुष्य जैसी आकृतियों से घिरी है।[४] मार्शल इसको शिव पशुपति का प्रारम्भिक रूप मानते हैं।[५] विभिन्न कालों में पत्थर, धातु, काष्ठ तथा मिट्टी से शिव के विविध स्वरूपों की मूर्तियाँ बनीं।

वैदिक काल में लिंग पूजा की अपेक्षा शिव का पुरूष विग्रह रूप अधिक लोकप्रिय था। महाकाव्यों में शिव के सौम्य और कल्याणकारी रूप का और अधिक विकास हुआ। **रामायण में शिव का श्रीकण्ठ, महादेव, रूद्र, लम्बक, पशुपतिनाथ तथा शंकर आदि नामों** से अनेकशः उल्लेख भी हुआ है।[६] **रामायण** में समुद्र पर सेतु–निर्माण से पूर्व राम द्वारा शिवलिंग की स्थापना एवं पूजा का उल्लेख है।[७] **महाभारत** के द्रोण पर्व में अर्जुन द्वारा शिव से पाशुपत–अस्त्र प्राप्त करने के लिए उनकी तपस्या और उनसे युद्ध (किरातार्जुन) करने का उल्लेख है।[८] अश्वत्थामा ने भी शिव से प्राप्त खड्ग द्वारा अपने पिता द्रोणाचार्य की मृत्यु का प्रतिशोध लिया था।[९] **महाभारत** के विभिन्न आख्यानों में कृष्ण ने स्वयं शिव की महिमा गाई है। **महाभारत** में सृष्टिकर्ता के रूप में शिव का उल्लेख है। महाभारत के अनुशासन पर्व में लिंग पूजा का उल्लेख हुआ है।

शिव के विचित्र स्वरूप से सम्बन्धित कथा **'सुप्रभेदागम'** में मिलती है। एक बार शिव दिगम्बर रूप में मेरूपर्वत पर विराजमान थे। उनके आकर्षक व्यक्तित्व पर ऋषि पत्नियाँ मुग्ध हो गयीं और उनसे प्रेम करने लगीं। इस पर ऋषियों को क्रोध आया और उन्होंने शिव को मारने के लिए मंत्रयोग किया। मंत्रयोग स्थल से कृष्ण मृग, अपस्मार पुरूष, परशु, वृष, व्याघ्र, सिंह आदि प्रकट हुए। शिव ने सर्प को गले में और परशु को हाथ में लिया तथा आपस्मान पुरूष को पैरों से मर्दित किया। व्याघ्र एवं सिंह को मारकर उसका चर्म वस्त्र के रूप में धारण किया। नरमुण्ड तथा चन्द्रमा को अपने जटामुकुट में धारण किया।

स्वतंत्र शैव धर्म के विकास से ही कालान्तर में शिव परिवार की धारणा भी विकसित हुई और उनकी भी देवता के समान पूजा की गयी। शिव परिवार के विभिन्न देवी–देवताओं, यथा – कार्तिकेय, गणेश, गंगा, पार्वती को शिव की मूर्तियों के साथ ही स्वतंत्र मूर्तिरूपों में भी अभिव्यक्त किया गया।[१०] कुषाण–काल में शिव की पर्याप्त मूर्तियाँ बनीं जिनमें शिव को लिंग और पुरूष–विग्रह रूप में तथा उमामाहेश्वर और अर्द्धनारीश्वर रूप में भी दिखाया गया है। इस दृष्टि से कुषाण–मुद्राओं पर शिव का अंकन विशेष उल्लेखनीय रहा है जिसमें शिव को दो और चार हाथों वाला उर्ध्वलिंग, व्याघ्र चर्मधारी तथा करों में परशु

जलपात्र, मृग, त्रिशूल, वज्र जैसे आयुधों के साथ भी दिखाया गया है।[११] किन्तु गुप्त काल में शिव के प्रतिमालक्षण में और विकास हुआ तथा कई नवीन तत्व निर्धारित हुए।

शिवलिंगों का निर्माण प्राचीन काल से ही विशेष लोकप्रिय था। विविध रूपों में शिव की मानव मूर्तियों के निर्माण की लोकप्रियता के बाद भी शिवलिंग का अंकन सभी केन्द्रों और कालों में विशेष लोकप्रिय रहा जिसकी पुष्टि एलोरा के कैलास, तंजौर और गंगैकोडचोलपुरम् के बृहदीश्वर, खजुराहो के कन्दरिया–महादेव, काँची के कैलासनाथ, भुवनेश्वर के लिंगराज मन्दिरों के गर्भगृहों में शिवलिंगों की स्थापना से होती है।

शिव संहार देवता के साथ ही भक्तों के लिए कल्याणकारी भी है। वास्तव में शिव के नाम की सार्थकता ही उनके कल्याणकारी रूप में है। यदि सूक्ष्मता से देखें तो शिव के रूपों की पृष्ठभूमि में ही सृष्टि और मानवता के कल्याण का मंत्र निहित है। शिव चाहे त्रिपुरान्तक रूप में या यमारि, अन्धकासुर, कामान्तक रूपों में सृष्टि के कल्याण हेतु ही असुरों का संहार करते हैं। शिव मूर्तियों को मुख्यतः दो वर्गों में बाँटा जा सकता है– 'उग्र' और 'सौम्य'। उग्र रूप में शिव राक्षसों का विनाश करते हुए विकराल रूप में निरूपित होते हैं। इनमें गोल और रक्तिम नेत्रों, तृतीय नेत्रों, लम्बी ऐंठी मूछें, बाहर निकले दाँत वाले, रौद्रमुख शिव, परशु, त्रिशुल, शूल, धनुष–बाण, खड्ग जैसे संहारक आयुधों तथा नरमुण्ड माला से युक्त होते हैं। सौम्य (या अनुग्रह रूप) में शिव का कल्याणकारी भाव प्रदर्शित होता है। इस स्वरूप में सौम्य और शान्त शिव इच्छित वस्तु को प्रदान करने वाले, पार्वती के साथ सम्भाषण करने वाले, योग, ज्ञान तथा संगीत (वीणाधर) की शिक्षा देने वाले और प्रसन्न होकर अनुग्रह करने वाले हैं।[१२] इनके अलावां नृत्यमूर्ति तथा शिव की अन्य विशिष्ट मूर्तियाँ, जैसे – दक्षिणामूर्ति, कल्याण सुन्दर मूर्ति, लकुलीश और शैवागमों के आधार पर निर्मित त्रिमूति या पंचमुख मूर्ति भी उल्लेखनीय है। विभिन्न कथानकों के आधार पर पुराणों में शिव के विविध अनुग्रह एवं संहार प्रतिमाओं की कल्पना और तदनुरूप एलोरा, एलिफेण्टा, तंजौर, काँचीपुरम्, खजुराहो, भुवनेश्वर आदि पुरास्थलों के शिव मन्दिरों की भित्तियों पर अंकन हुआ है।

एलोरा के शिल्पी ने शिव को एक विराट परिवेश में देखा, फलस्वरूप उसने शिव महादेव की तीनों शक्तिरचना, पालन और संहार का अत्यन्त मर्यादित और गौरवपूर्ण दृष्टि से विविध स्वरूपों में निरूपण किया। ब्राह्मणदेव मूर्तियों में एलोरा में शिव के सौम्य, संहार तथा अन्य स्वरूपों की मूर्तियाँ संख्या की दृष्टि से सर्वाधिक है। इस स्थल पर शैव परिवार के अन्य देवी–देवताओं की भी पर्याप्त मूर्तियाँ हैं। शिव के अनुग्रह स्वरूपों की ही मूर्तियाँ मिली हैं, इनमें रावणानुग्रह स्वरूप की सर्वाधिक मूर्तियाँ हैं। अनुग्रह मूर्तियों की तुलना में शिव के उग्र या संहार स्वरूप की एलोरा में अधिक मूर्तियाँ हैं। एलोरा में गजासुर–संहार, त्रिपुरान्तक, अन्धकासुर–वध, कालारि, भैरव तथा वीरभद्र स्वरूपों की मूर्तियाँ हैं। इनमें भी त्रिपुरान्तक, अन्धकासुर–वध और भैरव की सर्वाधिक मूर्तियाँ हैं। शिव की अन्य मूर्तियों में नटराज, दक्षिणामूर्ति, कल्याणसुन्दर, शिव–पार्वती, गंगाधर, महेश, लकुलीश, लिंगविग्रह, लिंगोद्भव तथा शिववाहन वृषभ (नन्दी) की मूर्तियाँ हैं। इनमें कल्याणसुन्दर, शिव–पार्वती और गंगाधर मूर्तियाँ अपेक्षाकृत अधिक हैं।

विष्णुधर्मोत्तर[१३] में शिव की पंचमुखी तथा दशभुजी मूर्ति का उल्लेख हुआ है। सद्योजात, वामदेव, अघोर, तत्पुरूष और ईशान् शिव के पाँच मुख हैं। वामदेव को छोड़कर अन्य सभी मुख त्रिनेत्र हैं। महादेव रूद्राक्षमाला और कमण्डलु, सदाशिव धनुष और बाण, भैरव दण्ड और बीजपूरक तथा नन्दी खेटक और शूल से युक्त बताये गये हैं।

मत्स्यपुराण[१४] में रूद्र नाम से दशभुज शिव प्रतिमा का उल्लेख हुआ है। रूद्र पुष्ट भुजाओं और स्कन्धें वाले तथा तप्तकांचन के समान वर्ण वाले बताये गये हैं। चन्द्रांकित जटामुकुट से शोभित शिव तरूण रूप में दीर्घ एवं विस्तृत नेत्र वाले तथा व्याघ्र चर्मधारी होंगें। शिव के दाहिने हाथों में खेटक, कपाल, खट्वांग तथा नाग और बाएँ हाथों में खड्ग, शक्ति, दण्ड और त्रिशूल का विधान है। शिव का एक हाथ वरदमुद्रा में होगा तथा एक अनय में रूद्राक्षमाला होगी।

दक्षिण भारतीय ग्रन्थ **मानसार** में त्रिनेत्र एवं चतुर्भुज शिव के हाथों में अभय मुद्रा, वरद मुद्रा तथा मृग आदि के प्रदर्शन का विधान है। स्थानक या आसन रूप में प्रदर्शित

शिव के जटामुकुट में अर्धचन्द्र, सर्प तथा गंगा के प्रदर्शन का भी उल्लेख है।[१५] रूद्र के साथ पार्वती के प्रदर्शन का भी उल्लेख है।[१६] **मयमत** में चन्द्रांकित जटाभार से शोभित त्रिनेत्र एवं वृषभारूढ़ शिव की अष्टभुज या दशभुज मूर्ति का उल्लेख है। वे स्थानक या नृत्यमुद्रा में भी हो सकते हैं। शिव के हाथों में शक्ति, शूल, गदा, नाग, खट्वांग, खेटक, कपाल तथा नागपाश का उल्लेख है। नृत्यमूर्ति में शिव के पार्श्वों में वृषभ तथा गणों की आकृतियाँ भी होंगीं।[१७]

दक्षिण भारत में पौराणिक शैव धर्म का छठीं से तेरहवीं शताब्दी तक अत्यधिक प्रचार हुआ। इसी समय मदुरा और एलोरा के प्रसिद्ध शिव मन्दिर निर्मित हुये। उत्तर भारत के समान ही दक्षिण में भी शिव की उपासना मानवाकार एवं लिंगाकार दोनों रूपों में होती थी। दक्षिण के शैव अनुयायी उत्तर भारत के शैवों की अपेक्षा असहिष्णु थे। हरिशंकर कौटियाल[१८] के अनुसार दक्षिण के धार्मिक पुनरूत्थान आन्दोलन की दो विशेषतायें थीं — (१) शिव के प्रति गहरी भावनात्मक भक्ति, (२) बौद्ध तथा जैन धर्मों की स्पष्ट शब्दों में आलोचना। इस धार्मिक आन्दोलन के नेताओं को नयनार कहा जाता था, इनकी संख्या ६३ थी। इनके तीन प्रमुख नेता थे — संत अप्पर, नान सम्बन्दर और सुन्दरमूर्ति। सम्बन्दर ने अपने परिगम में शिव की स्तुति जैनियों को परास्त करने वाले सैनिक के रूप में की है। संत अय्यर प्रारम्भ में जैन थे, परन्तु उन्होंने जैन सिद्धान्तों को भ्रष्ट बताकर उनकी आलोचना करते हुए अपने धर्म परिवर्तन का औचित्य सिद्ध किया। इनके अतिरिक्त मणिक वासगर नामक सन्त का उल्लेख मिलता है। इन्होंने बौद्धों को अपने शास्त्रार्थ से पराजित करके शैव धर्म का प्रचार किया। **'पेरिय पुराण'** में दक्षिण के ऐसे ही अनेक सन्तों के कृतकृत्यों का वर्णन मिलता है। इन सन्तों की शिव भक्ति भावनात्मक थी, इनके बाद आने वाले आचार्यों ने शैव मत के दार्शनिक पक्ष का वर्णन किया। इन आचार्यों को सन्तनाचार्य कहा गया है। इनमें भरायीज्ञान तथा उमापति शिवाचार्य के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

दक्षिण भारत में प्रारम्भ में शैवों और वैष्णवों में सहिष्णुता की भावना थी। वे विष्णु और शिव में भेद नहीं मानते थे। तिरूमूलर के समय से शैव वैष्णव मतभेद के चिन्ह

दृष्टिगत होते हैं। धीरे–धीरे यह मतभेद बढ़ता गया और जैन तथा बौद्ध धर्मों के ह्रास के समय यह संघर्ष चरम सीमा पर पहुँचा। तिरूमलाई नामक वैष्णव अलवार के विषय में प्रसिद्ध है कि वह शैवों को नितान्त विवेक शून्य मानता था। यह संघर्ष साधारण जनता तक पहुँचा होगा, इसमें सन्देह नहीं। ऐसी स्थिति में साम्प्रदायिक सद्भाव के लिये राजकीय प्रयास किये गये। इसका स्पष्ट प्रमाण एलोरा का कला क्षेत्र माना जा सकता है।

दक्षिण भारत में शैव धर्म का जैनियों के साथ कड़ा संघर्ष हुआ तथापि वे जैनियों से प्रभावित हुये इसके भी प्रमाण प्राप्त हुये हैं। उदाहरणार्थ – पेरियपुराण की मुनिपराय की कथा दक्षिण भारत में कुछ शैव दिगम्बरों के अस्तित्व पर प्रकाश डालती है।

इस युग के अन्तिम चरण में दक्षिण में वीर शैव मत का आविर्भाव हुआ। इसके प्रवर्तक वासवराज थे। वे जाति से ब्राह्मण थे और विज्जवल के मंत्री थे। कर्नाटक इस समय जैन धर्म का गढ़ था, किन्तु विज्जवल ने यहाँ जंगमों की सहयता से शैव धर्म का प्रचार किया। विज्जवल के पश्चात् उसके भानजे चित्रवासव ने वीर शैव मत का प्रचार किया। इस मत के अनुयायी लिंगायत कहलाते हैं। वासव के बाद उसके भतीजे ने वीर शैव मत का प्रचार कार्य हाथ में लिया। वीर शैव सन्तों के भक्ति गीतों को वचन–शास्त्र कहा जाता है। इनका मुख्य लक्ष्य पराशिव है, जो "सत्–चित्–आनन्द" स्वरूप है।

<u>वर्गीकरण</u> :

अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से एलोरा की शिव प्रतिमाओं को निम्नलिखित वर्गों में विभाजित किया जा सकता है —

(क) <u>सौम्य या अनुग्रह मूर्तियाँ</u> :

शिव के सौम्य स्वरूपों के अन्तर्गत उन्हीं मूर्तियों को रखा गया है जो प्रसन्न होकर भक्तों पर शिव द्वारा अनुग्रह करने से सम्बन्धित है। शिव के सौम्य स्वरूप की अन्य मूर्तियाँ तीसरे वर्ग में कुछ अन्य मूर्तियों के साथ वर्णित है। सौम्य या अनुग्रह मूर्तियाँ मुख्यतया

इस प्रकार से हैं, जैसे – रावणानुग्रह, किरातार्जुन (या आर्जुनानुग्रह), रावण का सिरदान।

(ख) <u>उग्र या संहार मूर्तियाँ</u> :

शिव मुख्यतया संहार या प्रलय से सम्बद्ध हैं। सम्भवतः इसी कारण शिल्प से सर्वत्र शिव के संहार स्वरूप की मूर्तियाँ ही सर्वाधिक संख्या में बनीं। भारतीय शिल्प में बहुतायत से व्यक्त संहारक रूपों में शिव को संहार कार्यों में संलग्न दिखाया गया है। इन संहार मूर्तियों में बहुत से कथानक अभिव्यक्त हैं जिनमें कभी शिव की असुर या दुष्ट का संहार करते हुए दिखाये गये हैं (गजासुर, अन्धकासुर, त्रिपुरान्तक) और कभी देवताओं को दण्डित करते हुए (ब्रह्माशिरच्छेदक, कालारि, कामान्तक और शरभेष)। इस स्वरूप में जहाँ एक ओर शिव संहार हेतु उपस्थित होते हैं, वहीं दूसरी ओर अपने भक्तों की सुरक्षा हेतु भी प्रकट होते हैं, जैसे– कालारि मूर्ति। शिव की संहारमूर्तियों को साधारण तौर पर दो भागों में बाँटा जा सकता है –– (१) ऐसी संहार मूर्तियाँ जिनमें विभिन्न पौराणिक कथानकों की मूर्त अभिव्यक्ति की गयी है, जैसे – गजासुर संहार, कालारि, त्रिपुरान्त, शरभेष, कामान्तक, ब्रह्मशिरश्च्छेदक आदि। (२) ऐसी संहार मूर्तियाँ जो किसी पौराणिक गाथा से सम्बन्धित नहीं हैं। जैसे– भैरव, अघोर, कंकाल, विरूपाक्ष आदि।

किन्तु प्रमाणिक तौर पर एलोरा में शिव की उग्र या संहार मूर्तियाँ मुख्यतया इस प्रकार से है; जैसे – गजासुर संहार, त्रिपुरान्तक, अन्धकासुर वध, कालारि (या यमान्तक), भैरव, वीरभद्र।

(ग) <u>अन्य मूर्तियाँ</u> :

एलोरा में अनुग्रह एवं संहार मूर्तियों के अतिरिक्त अन्य मूर्तियाँ हैं – नटराज, दक्षिणामूर्ति (महायोगीश्वर), लकुलीश, शिव–पार्वती, कल्याण सुन्दर, महेश मूर्ति, गंगाधर (या गंगावतरण), लिंगोद्भव (या लिंग विग्रह)।

<u>शिव के विभिन्न प्रतिमाशास्त्रीय स्वरूपों का निरूपण</u>

एलोरा में उपलब्ध शिव के प्रतिमाशास्त्रीय स्वरूपों का विस्तृत निरूपण अलग–अलग निम्नलिखित प्रकार से किया गया है ––

(१) <u>लिंगोद्भव प्रतिमा</u> :

'अपराजित पृच्छा' के कथानक के आधार पर लिंगोद्भव प्रतिमा के शास्त्रीय आधार के विषय में कहा जा सकता है कि शिव की प्रतिमा द्विभुजी होनी चाहिए एक हाथ त्रिशूलधारी और दूसरा वरदमुद्रा में होना चाहिये, शीर्ष पर अर्द्धचन्द्र शोभित हो और नाग यज्ञोपवीतधारी हो।

एलोरा की गुफा संख्या सोलह की लिंगोद्भव प्रतिमा अपराजितपृच्छा में उल्लिखित शास्त्रीय विधानों के सर्वथा अनुरूप बनी हुई ज्ञात होती है। अंशुमदभेदागम, सुप्रभेदागम, उत्तरकामिकागम, कारणागम और शिल्प रत्न में प्रतिमा उभय पार्श्वों में हंसरूप ब्रह्म और वराह रूप विष्णु के उत्कीर्णन का अतिरिक्त वर्णन है।[१६] एलोरा की लिंगोद्भव प्रतिमा में इस शास्त्रीय विधान का भी पालन किया गया है।

(२) <u>कालारि प्रतिमा</u> :

बृजभूषण श्रीवास्तव ने कालारि की एलोरा में बनी प्रतिमा को पूर्णतः शास्त्रीय विधानानुसार बनी प्रतिमा माना है।[२०] वस्तुतः इस प्रतिमा में शिव का दाहिना पैर लिंग से निकलता हुआ जमीन पर आधारित बनाया गया है। साथ ही बाँयां पैर यम पर प्रहार कर रहा है। यम अपने बायें हाथ में पाश बन्धन लिये हुए हैं, जो तपश्चर्यारत् मार्कण्डेय की गर्दन में फँसा हुआ है। शिव के प्रहार से यम पीछे की ओर गिरते दिख रहे हैं। उनका दाँया हाथ उपर उठ गया है। इस प्रकार कालारि की यह प्रतिमा पूर्णतः शास्त्रीय विधानानुसार निर्मित मानी जा सकती है।

(३) <u>एकाकी शिव प्रतिमा</u> :

एकाकी शिव से सम्बन्धित प्रतिमा के निर्माण का विधान बताते हुए 'अंशुमदभेदागम' में कहा गया है[२१] कि शिव का एक हाथ अभय या वरद मुद्रा में हो, अन्य दो हाथों में टंक एवं कृष्ण मृग हो। मूर्ति समभंग मुद्रा में अकेली बनी हो। उत्तरकामिकागम[२२] के अनुसार एक दाहिना हाथ सिंह कर्ण, कटक या कट्यावलम्बित मुद्रा में हो सकता है। हाथों के टंक एवं मृग कर्णसूत्र तक ऊपर उठे हों। बायें कान में रत्नकुण्डल, शंख पत्र या पद्मपत्र

होना चाहिये। मूर्ति पद्मपीठ पर खड़ी हो। शिल्परत्न, पूर्वकारणागम तथा श्री तत्वनिधि में भी इसी प्रकार के विवरण प्राप्त होते हैं।

एलोरा की एकाकी शिव की प्रतिमायें उपरोक्त शास्त्रीय विधानों के सर्वथा अनुरूप ही बनायी गयी है। एलोरा की गुफा संख्या सोलह की पूर्वी दीर्घा के दसवें दृश्य की प्रतिमा की शास्त्रीय विधानों से अनुरूपता बताते हुए बताया जा सकता है कि इस प्रतिमा में शिव अंशुमदभेदागम के उपरोक्त विधान के अनुरूप समभंग मुद्रा में स्थानक खड़े हैं, चतुर्भुजी हैं एवं उत्तरकामिकागम के विधान के अनुरूप उनके एक दायें हाथ में सर्प है दूसरा बायाँ हाथ अभय मुद्रा में है, एक बायाँ हाथ कट्यावलम्बिका मुद्रा में है।

(४) <u>उमा–माहेश्वर प्रतिमा</u> :

उमा–माहेश्वर प्रतिमा के निर्माण का विधान अंशुमदभेदागम[२३], शिल्परत्न[२४], पूर्वकारणागम[२५], विष्णुधर्मोत्तरपुराण[२६], रूपमण्डन[२७] एवं श्रीमद्भागवत पुराण[२८] आदि ग्रन्थों में उल्लिखित है।

एलोरा में बनी उपरोक्त उमा–माहेश्वर प्रतिमा रूपमण्डन में विहित शास्त्रीय आधारों पर बनाई गयी प्रतीत होती है। रूपमण्डन[२६] के शास्त्रीय विधान के अनुरूप शिव को चतुर्भुजी बनाया गया है। कुमार तथा भृंगी ऋषि को बनाया गया है तथा देवी को शिव की गोद में ध्यान करते हुए बनाया गया है।

(५) <u>कल्याण सुन्दर प्रतिमा</u> :

कल्याण सुन्दर प्रतिमा निर्माण का शास्त्रीय विधान अंशुमदभेदागम[३०], शिल्परत्न[३१], पूर्वकारणागम और उत्तरकामिकागम, विष्णु पुराण[३२] आदि ग्रन्थों में उल्लिखित मिलता है।

एलोरा की उन्तीसवीं गुफा की विवेच्य कल्याण सुन्दर अंशुमदभेदागम[३३] में उल्लिखित प्रतिमा शास्त्रीय विधानों के सर्वथा अनुरूप बनायी गयी है। शिव स्थानक मुद्रा में खड़े हैं। उनका बाँया पैर सीधा तथा दाहिना पैर अल्पनत बनाया गया है। दाहिना हाथ आगे बढ़ा

हुआ है। बायाँ हाथ कट्यावलम्बित मुद्रा में है। शिव जटा, मुकुट, केयूर, उदरबन्ध, सर्पकुण्डल हार तथा चन्द्र से अलंकृत है। शिव मूर्ति के बायें पार्श्व में पार्वती की प्रतिमा बनी हुई है वह अपने दाहिने हाँथ को आगे बढ़ा कर शिव के आगे बढ़े दायें हाथ को ग्रहण करती प्रदर्शित है। सामने ब्रह्मा हवन करते हुए बने हैं। विष्णु लक्ष्मी के साथ कन्यादान करते हुए प्रदर्शित हैं।

डॉ गोपीनाथ राव[३४] ने एलोरा की इस प्रतिमा का सात प्रमुख कल्याण सुन्दर प्रतिमाओं में स्थान दिया है।

(६) <u>अर्धनारीश्वर प्रतिमा</u> :

अर्धनारीश्वर प्रतिमा निर्माण के शास्त्रीय विधानों की विस्तृत विवेचना विष्णु धर्मोत्तर पुराण[३५], शिल्परत्न[३६], अंशुमदभेदागम[३७], कामिकागम, सुप्रभेदागम, कारणागम तथा मत्स्यपुराण[३८] इत्यादि ग्रन्थों में प्राप्त होती है।

एलोरा की गुफा संख्या सोलह की दक्षिणी वीथिका की प्रथम अर्धनारीश्वर प्रतिमा विष्णुधर्मोत्तर पुराण में उल्लिखित प्रतिमा शास्त्रीय विधानों के सर्वथा अनुरूप बनी हुई है। इस पुराण में अर्धनारीश्वर प्रतिमा के निर्माण का विधान बताते हुए उल्लिखित किया गया है[३९] कि इस प्रतिमा में शरीर का वाम भाग स्त्री तथा दक्षिण भाग पुरूष का होना चाहिये। पुरूष भाग शिव का होता है जो जटा मुकुट, चन्द्र, सर्प, कुण्डल, एकार्द्ध नेत्र, दो तीन या चार हाथ से युक्त होता है। हाथ अभय या वरदमुद्रा में, परशु या त्रिशूल या अक्षमाला या कपालयुक्त होते हैं। शिवाभूषण से युक्त दायें भाग में पुरूष का वक्ष बनाया जाता है। नाग यज्ञोपवीत तथा सर्प मेखला से वह भाग अलंकृत होता है। शरीर का बायाँ भाग स्त्रियोचित विशेषताओं से युक्त होता है। यह करण्ड–मुकुट या जूड़ास, ललाट पर अर्धतिलक, आँख में काजल, कर्ण–कुण्डल से युक्त होता है। यदि बायें भाग में दो हाथ हो तो एक हाँथ नन्दी के सहारे हो तथा एक कटक मुद्रा में हो जो नीलोत्पल युक्त हो या नीचे लटक रहा हो। यदि एक ही हाथ हो तो इसमें दर्पण या तोता हो, केयूर, कंगन तथा अन्य आभूषणों से अलंकृत हो। वाम वक्ष पूर्ण विकसित कुच से युक्त हो इस रूप

को विष्णु धर्मोत्तर पुराण[४०] में गौरीश्वर रूप कहा गया है।

(७) <u>नटराज शिव की प्रतिमा</u> :

शिव की नटराज प्रतिमा के निर्माण के शास्त्रीय विधान अंशुमदभेदागम[४१], उत्तरकामिकागम[४२], शिल्परत्न[४३], मत्स्य पुराण[४४] आदि ग्रन्थों में उल्लिखित मिलते हैं।

एलोरा की गुफा चौदह की नृत्य प्रतिमा अंशुमदभेदागम[४५] में उल्लिखित शास्त्रीय विधानों के सर्वथा अनुरूप बनायी गयी है। ग्रन्थ के विवरण के सर्वथा अनुरूप यह प्रतिमा उत्तम--दश--ताल की है। अगला बांया हाथ दण्ड हस्त मुद्रा में है, पीछे के एक हाथ की हथेली में अग्नि है। दायाँ एक हाथ उभय मुद्रा में है। इसकी बाँह पर सर्ववलय है। पीछे के दाहिने हाथ में ३ मरू है। दाहिना पैर अपस्मार पुरूष पर कुछ झुका हुआ रखा है। शिव एक दायें हाथ में त्रिशूल लिये हुये हैं। शिव जटा मुकुट, सर्प, रत्नाभूषण, कपाल तथा चन्द्र से अलंकृत हैं। मूर्ति के बायें उमा की स्थानक प्रतिमा बनी हुई है।

(८) <u>शिव की रावाणानुग्रह प्रतिमा</u> :

जिम[४७], गोपीनाथ राव[४८], ओ०सी०गांगुली[४६], ए०के०कुमारास्वामी[४६] आदि कला मर्मज्ञों ने एलोरा की विवेच्य रावणानुग्रह प्रतिमा की अत्यधिक प्रशंसा की है। वस्तुतः ये प्रतिमायें पूर्णतः शास्त्रीय आधार पर बनायी गयी है। बृजभूषण श्रीवास्तव[५०] ने इस प्रतिमा के शास्त्रीय आधार को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि रावणानुग्रह की कथा के आधार पर जो प्रतिमा निर्मित की जाती है, उसमें पर्वत के ऊपर शिव तथा सहमी हुई पार्वती को निर्मित किया जाता है। पर्वत के नीचे दशानन को बनाया जाता है। एलोरा की रावणानुग्रह प्रतिमायें पूर्णतः इस शास्त्रीय आधार पर ही बनायी गयी है।

(९) <u>शिव की अन्धकासुर वध प्रतिमा</u> :

शिव की अन्धकासुर के कथानक से सम्बन्धित प्रतिमा के निर्माण का विधान अंशुमदभेदागम[५१], शिल्प रत्न,[५२] तथा अन्य शैवागमों में उल्लिखित मिलता है। अंशुमदभेदागम[५३] शास्त्रीय विधान के सर्वथा अनुरूप इस दृश्य में भगवान शिव को आठ

भुजाओं वाला बनाया गया है। गज चर्म को शिव ने अपने हाथों में इस प्रकार से रखा है कि वह प्रभामण्डल के सदृश प्रतीत हो रहा है। शिव के हाथों में अंशुमदभेदागम के विवरण के अनुरूप त्रिशूल, डमरू, पाश, हस्तिचर्म, हस्ति कमल, हस्ति दन्त है। इस दृश्य में उमा को शिव प्यार करते हुए बने हैं। एस०पी०तिवारी[५४] ने एलोरा की अंधकासुर वध प्रतिमाओं को पूर्णतः शास्त्रीय विधानानुसार निर्मित माना है।

सन्दर्भ संकेत

अध्याय तृतीय

१. बनर्जी, जितेन्द्रनाथ, डेवलपमेन्ट ऑफ हिन्दू आइकोनोग्राफी, कलकत्ता, १६५६, पृष्ठ ४४६.

२. डेवलपमेण्ट ऑफ हिन्दू आइकनोग्राफी (जितेन्द्र नाथ बनर्जी), पृष्ठ ५१२–१३

३. ज्ञातव्य है कि शैव धर्म भारत के सुदूर दक्षिण–पूर्व एशिया के देशों में भी लोकप्रिय था।

४. जे०एन०बनर्जी ने योगासन के स्थान पर कूर्मासन बताया है – डेवलपमेण्ट ऑफ हिन्दू आइकोनोग्राफी, पृष्ठ १५६

५. मार्शल, जॉन एफ०, मोहनजोदड़ो ऐण्ड इण्डस सिविलाइजेशन, खण्ड–१, लन्दन १६३१, पृष्ठ ५६

६. मजूमदार, आर०सी० और पुषालकार, ए०डी० (सं०), द एज ऑफ इम्पीरियल यूनिटी, बम्बई, १६५१, पृष्ठ ४५६

७. मजूमदार, आर०सी० और पुषालकार, ए०डी० (सं०), द एज ऑफ इम्पीरियल यूनिटी, बम्बई, १६५१, पृष्ठ ४५७

८. महाभारत, द्रोण पर्व, ८०–८१

६. महाभारत, पौपितकपर्व, ७

१०. उपाध्याय, वासुदेव, प्राचीन भारतीय मूर्ति विज्ञान, वाराणसी, १६७०, पृष्ठ १०६

११. विस्तृत विवेचना के लिए देखिए, सिंह ओ०पी०, रिलीजन एण्ड आइकोनोग्राफी आन अर्ली इण्डियन क्वायन्स, अध्याय शिव।

१२. उपाध्याय, वासुदेव, पूर्वनिर्दिष्ट, पृष्ठ ११७

१३. विष्णुधर्मोत्तर पुराण, ३.१

१४. मत्स्य पुराण, ३५६. ३–१०

१५. मानसार, ५१. ६६–८२

१६. मानसार, ५१. ८३

१७. मयमत, ३६. ३३–४२

१८. झा एवं श्रीमाली, प्राचीन भारत का राजनैतिक इतिहास, पृष्ठ, ३६७

१६. राव, टी०आर०, एलीमेण्ट्स ऑफ हिन्दू आइकोनोग्रफी, द्वितीय खण्ड, द्वितीय भाग, पृष्ठ ५१–५३

२०. श्रीवास्तव, बृजभूषण, प्राचीन भारतीय प्रतिमा विज्ञान एवं मूर्तिकला, पृष्ठ २६३

२१. अंशुमद्भेदागम, अध्याय–३६

२२. उत्तरकामिकागम, अध्याय–८०

२३. अंशुमद्भेदागम, अध्याय–६३

२४. शिल्परत्न, अध्याय–२२

२५. पूर्वकारणागम, अध्याय–११

२६. विष्णुधर्मोत्तर पुराण ८१०५/८–१०)

२७. रूपमण्डन (३५/१६/२०)

२८. श्रीमद्भागवत पुराण (६/१३/५)

२६. रूपमण्डन (३५/१६/२०)

३०. अंशुमद्भेदागम, अध्याय–६८

३१. शिल्परत्न; अध्याय–२२

३२. विष्णुपुराण (३/३८/२७)

३३. अंशुमद्भेदागम, अध्याय–६८

३४. राव, गोपीनाथ टी०ए०, एलीमेण्ट्स ऑफ हिन्दू आइकोनाग्राफी, खण्ड–२, भाग–१, फलक (१०१–१०७)

३५. विष्णुधर्मोत्तर पुराण (५५/२–४; ५५/८; ५५/६; ५५/१८–१६)

३६. शिल्परत्न, अध्याय–३२

३७. अंशुमद्भेदागम, अध्याय–६६

३८. मत्स्यपुराण– २६०/८–१७

३६. विष्णुधर्मोत्तर पुराण– ५५/६–१३/

४०. विष्णुधर्मोत्तर पुराण–५५/८

४१. अंशुमद्भेदागम, अध्याय–६५

४२. उत्तरकामिकागम, अध्याय–४६

४३. शिल्परत्न, अध्याय–२२.

४४. इन्दुमति जैन, प्रतिमा विज्ञान, पृष्ठ–२८४

४५. अंशुमदभेदागम, अध्याय–६५

४६. जिमर, द आर्ट ऑफ इण्डियन एशिया, भाग–२, फलक–२१२

४७. राव गोपीनाथ, एलीमेण्टस ऑफ हिन्दू आइकोनोग्राफी, जिल्द–२, भाग–१, फलक ५३–५४

४८. गांगुली, ओ०सी०, द आर्ट ऑफ राष्ट्रकूट; फलक–८

४९. कुमारास्वामी, ए०के०; हिस्ट्र ऑफ इण्डियन एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट, पृष्ठ १००

५०. श्रीवास्तव, बृजभूषण; प्राचीन भारतीय प्रतिमा विज्ञान, पृष्ठ–७८

५१. अंशुमदभेदागम, अध्याय–७०

५२. शिल्परत्न, अध्याय–२२

५३. अंशुमद्भेदागम, अध्याय–७०

५४. तिवारी, एस०पी०, हिन्दू आइकोनोग्राफी, फीगर १६–२०